अस्वाध्याय

निम्नलिखित चौंतीस कारण टाल कर स्वाध्याय करना चाहिये—

आकाश संबंधी १० अस्वाध्याय,

	काल मर्यादा
१ बड़ा तारा टूटे तो	एक प्रहर
२ किसी दिशा में नगर जले जैसी लपटें उठने का दृश्य दिखाई दे तो	जब तक रहे
३ अकाल में मेघ-गर्जना हो तो	दो प्रहर
४ " बिजली चमके तो	एक प्रहर
५ " बिजली कड़के तो	दो प्रहर
६ शुक्ल पक्ष की १-२-३ की रात में—	प्रहर रात्रि तक
७ आकाश में यक्ष का चिह्न हो, जब तक दिखाई दे।	
८-९ काली और सफेद धुंअर	जब तक रहे
१० आकाश-मण्डल धूलि से आच्छादित हो	"

औदारिक सम्बन्धी १० अस्वाध्याय

११-१३ हड्डी, रक्त और मांस, ये तिर्यञ्च के ६० हाथ

卐 नमो सिद्धाणं 卐

श्री अन्तकृतदशांग सूत्र

—१—

तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णाम णयरी होत्था, वण्णओ। तत्थ णं चंपाए णयरीए उत्तरपुरत्थिमे दिसि-भाए एत्थ णं पुण्णभद्दे णाम चेइए होत्था, वण्णओ। तीसे णं चंपाए णयरीए कोणिए णाम राया होत्था, महया हिमवंत, वण्णओ ॥१॥

भावार्थ— इस अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में श्रमण भगवान महावीर स्वामी के समय में चम्पा नामक नगरी थी। इस चम्पा नगरी का विशेष वर्णन औपपातिकसूत्र में किया गया है अतः वहीं से जानना चाहिए। चम्पा नगरी के उत्तर पूर्व दिशा भाग (ईशान-कोण में) पूर्णभद्र नाम का चैत्य (उद्यान) था। वहीं एक अति प्राचीन सुन्दर वनखण्ड× था। उसका भी विशेष वर्णन औपपातिकसूत्र से जानना चाहिये।

उस चम्पा नगरी में कोणिक नाम का राजा राज्य करता था। वह महा हिमवान् महा मलय मेरु और महेन्द्र पर्वत के

× जहाँ एक ही जाति के वृक्ष अधिक हों उसे वनखण्ड कहते हैं। कोई-कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि—जहाँ अनेक जाति के वृक्षों का समूह हो उसे 'वनखण्ड' कहते हैं।

अर्थ—उस काल उस समय में स्थविर * आर्य सुधर्मा स्वामी पांच सौ अनगारों के साथ तीर्थंकर भगवान की परम्परा के अनुसार विचरते हुए एवं अनुक्रम से ग्रामानुग्राम विहार करते हुए चम्पा नगरी के पूर्णभद्र नामक उद्यान में पधारे।

आर्य सुधर्मा स्वामी का आगमन सुन कर परिषद् उन्हें वन्दना करने के लिये एवं धर्म-कथा सुनने के लिये अपने अपने घर से निकल कर वहां पहुँची और वन्दना कर एवं धर्म कथा सुन कर लौट गई।

उस काल उस समय में आर्य सुधर्मा स्वामी की सेवा में

---

* प्रश्न—स्थविर किसे कहते हैं?

उत्तर—धर्म से डिगते हुए साधुओं को संयम में स्थिर करने वाले एवं साधु-मार्ग के नियमों में दृढ़, निरतिचार चारित्र पालने वाले साधु समाज में स्थिर एवं पूजनीय स्थविर कहे जाते हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं। इस अपेक्षा से स्थविर के ३ भेद हैं—१ वयःस्थविर २ श्रुत-स्थविर और ३ दीक्षा स्थविर।

१ वय स्थविर—जिन साधुओं की उम्र साठ वर्ष की हो वे वय-स्थविर कहलाते हैं। इन्हें जाति-स्थविर भी कहते हैं।

२ श्रुत-स्थविर—ठाणांग और समवायांग के ज्ञाता को श्रुत-स्थविर कहते हैं। इन्हें ज्ञान स्थविर भी कहते हैं।

३ दीक्षा-स्थविर—जिनकी दीक्षा पर्याय २० वर्ष की हो—उन्हें दीक्षा स्थविर कहते हैं। इन्हें प्रव्रज्या-स्थविर या पर्याय-स्थविर भी कहते हैं।

समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता? एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तंजहा—

गाहा—गोयम समुद्द सागर, गंभीरे चेव होइ थिमिए य।
अयले कंपिल्ले खलु, अक्खोभ पसेणई विण्हू॥१॥

अर्थ—जम्बू स्वामी के उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए

कोई-कोई 'अन्तगड' शब्द का ऐसा अर्थ करते हैं कि— जो महापुरुष अन्तिम श्वासोच्छ्वास में केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष में जाते हैं उन्हें अन्तगड कहते हैं। किन्तु यह अर्थ शास्त्रसम्मत नहीं है। क्योंकि केवलज्ञान होते ही तेरहवाँ गुणस्थान लिया जाता है। १३ वें गुणस्थान का काल [illegible] गुणस्थान है। इस गुणस्थान में योगों की प्रवृत्ति रहती है। इसके अन्त में योगों का निरोध कर १४ वें गुणस्थान में जाते हैं। इसलिये अन्तिम श्वासोच्छ्वास में केवलज्ञान उत्पन्न हुए की बात कहना ठीक नहीं है। केवलज्ञान [illegible] १३ वें गुणस्थान में कुछ ठहर कर उसके बाद [illegible] १४ वाँ गुणस्थान प्राप्त होता है। [illegible] इस प्रकार भव [illegible] का अन्त करने वाले [illegible] के जीवन का वर्णन इस सूत्र में किया गया है। इसलिये इसे अन्तगडदशा कहते हैं।

अण्णगिलायपामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं, अण्णेसिं च बहूणं ईसर जाव सत्थवाहाणं बारवईए नयरीए अद्धभरहस्स य समत्तस्स आहेवच्चं जाव विहरइ ॥५॥

अर्थ—उस द्वारिका नगरी के बाहर उत्तर पूर्व (ईशान कोण) में 'रैवतक' नामक पर्वत था। उस पर्वत पर नन्दन वन नामक उद्यान था जिसका पूरा वर्णन अन्य सूत्रों से जानना चाहिए। उस उद्यान में सुरप्रिय नामक यक्ष का यक्षायतन था। वह बहुत प्राचीन था। उस उद्यान में वनखण्ड से घिरा हुआ एक अशोक वृक्ष था।

उस द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव राज करते थे। जिस प्रकार महा हिमवान् पर्वत सीमा की मर्यादा करता है उसी प्रकार कृष्ण वासुदेव लोक मर्यादा को नियत एवं स्थिर करते थे और लोक-मर्यादा के पालक थे।

द्वारिका नगरी में समुद्रविजय आदि दस दशार्ह* और बलदेव आदि पाँच महावीर थे। प्रद्युम्न आदि साढ़े तीन करोड़ कुमार थे। [illegible]

* दशार्ह—[illegible] दशार्ह कहते हैं। वे दस इस प्रकार हैं—१ समुद्रविजय २ अक्षोभ्य ३ स्तिमित ४ सागर ५ हिमवान् ६ अचल ७ धरण ८ पूरण ९ अभिचन्द्र और १० वसुदेव। वसुदेव के पुत्र कृष्ण और [illegible] 'दशार्ह' कहते हैं।

पर्वतों के समान स्थिर एवं मर्यादापालक तथा बलशाली अश्वपति नाम के राजा थे। स्त्रियों के सभी लक्षणों से युक्त उनकी धारिणी नाम की रानी थी। वह धारिणी रानी किसी समय पुण्यात्माओं के शयन करने योग्य और कोमलता आदि गुणों से युक्त शय्या पर सोई हुई थी। उस समय उसने एक शुभ स्वप्न देखा। स्वप्न देख कर रानी जागृत हुई। उसने राजा के पास जा कर अपना देखा हुआ स्वप्न सुनाया। राजा ने स्वप्न का फल बतलाया। यथासमय रानी ने एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। बालक का लालनपालन बहुत सुखपूर्वक होता। उसने लिपि गणित आदि बहत्तर कलाओं को सीखा। उसके बाद युवावस्था होने पर उसका विवाह हुआ। उसका भवन बहुत सुन्दर था और उसकी आज्ञाकारिणी रूपवती स्त्रियाँ विनय सम्पन्न थीं। इस सब कथा का विस्तृत वर्णन भगवती सूत्र में दिये महाबल कुमार के वर्णन के समान समझना चाहिए। अन्तर इतना है कि इसका नाम भद्रनन्दी था। इसके पिता ने एक ही दिन में पाँच सौ राजकन्याओं के साथ इसका विवाह कराया। विवाह के बाद पाँच सौ हिरण्य (चाँदी) तथा पाँच सौ सुवर्ण आदि आठ-आठ वस्तुएँ दहेज में दी॥१६॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समो-सढे जाव विहरइ। परिसा निग्गया। राया णिग्गओ। भद्दे वि णिग्गए। जहा जमाली तहा रहेणं णिग्गए जाव णिग्गए। धम्मो कहिओ जाव राया परिसा पडिगया। अस्सा

कि 'हे भगवन् ! मैं अपने माता पिता से पूछ कर आपके पास दीक्षा लेना चाहता हूं। इसके बाद गौतमकुमार के अनगार होने तक का वृत्तान्त ज्ञातासूत्र के प्रथम अध्ययन में वर्णित मेघकुमार के समान समझना चाहिए। जैसे मेघकुमार वैराग्य प्राप्त कर माता पिता के बहुत समझाने पर भी भोग विलास की समस्त सामग्री को छोड़ कर अनगार बन गए, उसी प्रकार गौतमकुमार भी अनगार बन गए। अनगार बनने के बाद ईर्या-समिति भाषासमिति आदि से युक्त होकर निर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे रख कर (भगवान के कहे हुए प्रवचनों का पालन करते हुए) विचरने लगे। उसके बाद गौतम अनगार किसी समय में अर्हन्त भगवान् अरिष्टनेमि के शिष्य स्थविर साधुओं के समीप सावद्ययोग परिवर्जन निरवद्य योग सेवन रूप सामायिक आदि छह आवश्यक तथा ११ अंगों का अध्ययन किया। अध्ययन कर के बहुत-से चतुर्थभक्त (उपवास), षष्ठभक्त (बेला) अष्टमभक्त (तेला) दशमभक्त (चोला) द्वादशभक्त (पचोला) अर्द्धमास और मासखमण आदि तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। अर्हन्त भगवान अरिष्टनेमि ने द्वारिका नगरी के नन्दन वन उद्यान से विहार कर दिया और जनपदों में विचरते हुए विचरण करने लगे ॥७॥

तएणं से गोयमे अणगारे अण्णयाकयाइं जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ वंदित्ता

द्वितीय वर्ग

जइ णं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते दोच्चस्स णं भंते! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता?

एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठ अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—

अक्खोभे सागरे खलु, समुद्द हिमवंत अयलनामे य।
धरणे य पूरणे वि य, अभिचंदे चेव अट्ठमए ॥१॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए वण्ही पिया, धारिणी माया। जहा पढमो वग्गो तहा सव्वे। अट्ठ अज्झयणा गुणरयणतवोकम्मं, सोलस-वासाइं परियाओ, सेत्तुंजे मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धा।

एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥१॥

॥ इइ दोच्चो वग्गो अट्ठ अज्झयणा समत्ता ॥

अर्थ—जम्बू स्वामी आर्य सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं कि—हे भगवन्! सिद्धगति को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने प्रथम वर्ग के गौतम आदि दस अध्ययनों के [illegible]

अध्ययनों का कथन किया है। वे इस प्रकार हैं--

१ अणीयसेन २ अनन्तसेन ३ अजितसेन ४ अनिहतरिपु ५ देवसेन ६ शत्रुसेन ७ सारण ८ गज ९ सुमुख १० दुर्मुख ११ कूपक १२ दारुक और १३ अनादृष्टि।

हे भगवन्! इस तीसरे वर्ग में श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने तेरह अध्ययनों का वर्णन किया है तो प्रथम अध्ययन का क्या भाव प्रतिपादन किया है?

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिल-पुरे णामं णयरे होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धे वण्णओ। तस्स णं भद्दिलपुरस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सिरीवणे णामं उज्जाणे होत्था, वण्णओ। जियसत्तू राया। तत्थ णं भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई होत्था, अड्ढे जाव अपरिभूए। तस्स णं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा। तस्स णं णागस्स गाहावइस्स पुत्ते सुलसाए भारियाए अत्तए अणीयसेणे णामं कुमारे होत्था सुकुमाले जाव सुरूवे पंचधाइ परिक्खित्ते। तंजहा—खीरधाई, मज्जणधाई, मंडणधाई, कीलावणधाई अंक-धाई, जहा दढपइण्णे जाव गिरिकंदरमल्लीणेव चंपग-पायवे सुहंसुहेणं परिवड्ढइ ॥८॥

अर्थ—हे जम्बू! उस काल उस समय में भद्दिलपुर

भगवान् के समीप आ कर धर्म-कथा सुनी तथा माता पिता की आज्ञा प्राप्त कर दीक्षा ग्रहण कर ली। गौतमकुमार के अध्ययन से इसमें यह विशेषता है कि इन्होंने सामायिक आदि चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। बीस वर्ष दीक्षा-पर्याय का पालन किया और शत्रुञ्जय पर्वत पर जा कर एक मास की संलेखना कर के सिद्ध-बुद्ध मुक्त हुए। शेष सारा अधिकार गौतम कुमार के समान है।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि — हे जम्बू ! सिद्धगति को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तकृद्दशा के तीसरे वर्ग के प्रथम अध्ययन में अनीकसेन कुमार का उपर्युक्त वर्णन किया है।"

॥ इति तीसरे वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त ॥

जहा अणीयसेणे एवं सेसा वि अणंतसेणे अजियसेणे अणिहयरिऊ देवसेणे सत्तुसेणे छ अज्झयणा एगगमा। बत्तीसाओ दाओ वीसं वासाइं परियाओ, चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जंति, जाव सेत्तुंजे सिद्धा। छट्ठमज्झयणं समत्तं ॥

अर्थ — जैसा अनीकसेन कुमार का अध्ययन है वैसा ही अनन्तसेन, अजितसेन, अनिहतरिपु, देवसेन और शत्रुसेन कुमार के अध्ययनों का वर्णन है। इन छहों अध्ययनों का वर्णन एक

§ अनीकसेन कुमार ने सामायिक आदि ग्यारह [illegible] का अध्ययन [illegible] किया था। अनीकसेन ने चौदह [illegible] और [illegible] दीक्षा [illegible] किया था।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि—हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें अध्ययन में ये भाव कहे हैं।

हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की नगरी थी। वसुदेव नाम के राजा रहते थे। उनकी रानी का नाम धारिणी था। किसी एक रात्रि के समय उसने सिंह का स्वप्न देखा। गर्भ काल पूर्ण होने पर उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम सारणकुमार रखा गया। सारणकुमार ने बहत्तर कलाओं का अध्ययन किया। यौवन अवस्था प्राप्त होने पर माता पिता ने उसका विवाह कर दिया। पचास करोड़ सोनैया आदि की दात (दहेज) मिली। भगवान् अरिष्टनेमि का उपदेश सुन कर सारणकुमार ने दीक्षा अङ्गीकार की। चौदह पूर्व का अध्ययन किया और बीस वर्ष दीक्षा पर्याय पाली। शेष सब गौतम कुमार के समान शत्रुञ्जय पर्वत पर एक मास की संलेखना कर के सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हुए।

॥ इति सातवाँ अध्ययन समाप्त ॥

जइ णं भंते ! उक्खेवो अट्ठमस्स। एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमे जाव अरहा अरिट्ठणेमी। सामी समोसढे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतेवासी छ अणगारा भायरो सहोयरा होत्था। सरिसया सरिसत्तया सरिसव्वया णीलुप्पल-गवल-गुलिय-अयसिकुसु-

समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवो-कम्मेणं अप्पाणं भावेमाणा विहरित्तए । अहासुहं देवा-णुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह । तए णं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जी-वाए छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरंति ॥१॥

वे छहों अनगार जिस दिन दीक्षित हुए उसी दिन उन्होंने भगवान् को वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया— 'हे भगवन् ! यदि आपकी आज्ञा हो तो हमारी ऐसी इच्छा है कि हम यावज्जीवन निरंतर छट्ठ छट्ठ* (बेले-बेले) की तपश्चर्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करें।" भगवान ने कहा— "हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, वैसा करो । इस कार्य में विलम्ब मत करो।" इसके बाद वे छहों अनगार भगवान् की आज्ञा पा कर यावज्जीवन बेले बेले की तपश्चर्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥१॥

तए णं ते छ अणगारा अण्णया कयाइ छट्ठक्खमण-पारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेंति जहा गोयम

* छट्ठ-छट्ठ यह ठेठ की भाषा है किन्तु [illegible]

मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अड माणे वसुदेवस्स रण्णो देवईए देवीए गिहे अणुप्प- विट्ठे। तए णं सा देवई देवी ते अणगारे एज्जमाणे- पासइ, पासित्ता हट्टतुट्ठ चित्तमाणंदिया पीईमणा परम सोमणस्सिया हरिसवसविसप्पमाण हियया आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणु गच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहकेसराणं मोयगाणं थालं भरेइ, भरित्ता ते अणगारे पडिलाभेइ पडिलाभित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता पडिविसज्जइ ॥२॥

अर्थ—इन तीन संघाड़ों में से एक संघाड़ा द्वारिका नगरी के ऊंच-नीच और मध्यम कुलों में गृह-समुदानिक भिक्षा के लिए घूमता हुआ राजा वासुदेव और रानी देवकी के घर पहुंचा। उस समय (दो मुनियों) को अपने यहाँ आता हुआ देख कर देवकी महारानी अपने आसन से उठी और सात आठ कदम उनके सामने गई। उन दोनों अनगारों के दर्शनमात्र से आनन्द से वह अत्यन्त हर्षित होती हुई बोली— मैं धन्य हूँ जो मेरे घर अनगार पधारे। इस हेतु प्रमुदित चित्त से [illegible] हुई। मुनियों के [illegible] से [illegible] हुआ और [illegible] हुई। उनका

याए अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति, जण्णं ताइं चेव कुलाइं भत्तपाणाए भुज्जो भुज्जो अणुप्पविसंति ?॥४॥

इसके बाद तीसरा संघाडा भी इसी प्रकार देवकी महारानी के घर आया। देवकी महारानी ने उसे भी पूर्ववत् आदर भाव से सिंहकेसरी मोदक बहराया। इसके बाद वह विनयपूर्वक पूछने लगी— हे भगवन्! कृष्ण वासुदेव जैसे महाप्रतापी राजा की नौ योजन चौड़ी और बारह योजन लम्बी स्वर्गलोक के समान इस द्वारिका नगरी में ऊंच-नीच और मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए श्रमण निर्ग्रन्थों को आहार पानी नहीं मिलता है क्या? जिससे एक ही कुल में बार बार आना पड़ता है?॥४॥

तए णं ते अणगारा देवइं देविं एवं वयासी—नो खलु देवाणुप्पिये! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए नयरीए जाव देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्चणीय जाव अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति, णो चेव णं ताइं ताइं कुलाइं दोच्चं पि तच्चं पि भत्तपाणाए अणुप्पविसंति। एवं खलु देवाणुप्पिए! अम्हे भद्दिलपुरे णयरे णागस्स गाहावइस्स पुत्ता सुलसाए भारियाए अत्तया छ भायरो सहोदरा सरिसया जाव णलकूबरसमाणा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म संसारभउव्विग्गा भीया जम्मण-मरणाणं मुंडा जाव पव्वइया।

तब पुनः उन कृष्ण-वासुदेव ने भगवान् अरिष्टनेमि से पूछा — "हे भगवन् ! मृत्यु को चाहने वाला अज्ञात आदि से रहित वह पुरुष कौन है जिसने मेरे सहोदर लघुभ्राता गजसुकुमाल अनगार का अकाल में ही प्राण हरण कर लिया ?"
भगवान् ने कहा — "हे कृष्ण ! तुम उस पुरुष पर द्वेष मत करो क्योंकि उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार को साथ ... से सहायता दी है ॥२६॥

"कहण्णं भंते ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स णं साहिज्जे दिण्णे ? तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी — "से णूणं कण्हा ! तुमं ममं पायवंदए हव्वमागच्छमाणे बारवईए णयरीए एगं पुरिसं पाससि जाव अणुपविसिए । जहा णं कण्हा ! तुमं तस्स पुरिसस्स साहिज्जे दिण्णे । एवामेव कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स अणेगभव-सयसहस्स-संचियं कम्मं उदीरेमाणेणं बहुकम्मणिज्जरट्ठं साहिज्जे दिण्णे ।'

अर्थ — तब पुनः उन कृष्ण वासुदेव ने भगवान् से पूछा — "हे भगवन् ! उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार को सहायता कैसे दी ?" भगवान् ने कहा — "हे कृष्ण ! मेरे चरण-वन्दन के लिये आते हुए तुमने द्वारिका नगरी में [illegible] एक [illegible] ईंटों के ढेर में से एक-एक ईंट [illegible] घर [illegible] दीन-दुःखी वृद्ध पुरुष को देखा । [illegible]

नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव आभिसेयं हत्थिरयणं तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हत्थिं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव बारवई नयरी जेणेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

अर्थ—इसके बाद कृष्ण वासुदेव भगवान को वन्दन नमस्कार कर के आभिषेक्य हस्ती पर चढ़ कर द्वारिका नगरी में अपने भवन की ओर जाने लगे।

तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स कल्लं जाव जलंते अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पण्णे। एवं खलु कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं पायवंदए णिग्गए, तं णायमेयं अरहया विण्णायमेयं अरहया सुयमेयं अरहया सिट्ठमेयं अरहया भविस्सइ कण्हस्स वासुदेवस्स, तं ण णज्जइ णं कण्हे वासुदेवे ममं केणवि कुमारेणं मारिस्सइ त्ति कट्टु भीए सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता कण्हस्स वासुदेवस्स बारवइं नयरिं अणुप्पविसमाणस्स पुरओ सपक्खिं सपडिदिसिं हव्वमागए ॥ ८॥

सूर्योदय होते ही सोमिल ब्राह्मण ने अपने मन में सोचा कि 'कृष्ण-वासुदेव भगवान के चरण-वन्दन के लिये गए हैं। भगवान् तो सर्वज्ञ हैं। उनसे कोई बात छिपी नहीं है। भगवान् से गजसुकुमाल की मृत्यु सम्बन्धी सारी बात ज्ञात हो गई होगी। पूर्ण रूप से ज्ञात भी होगी और कृष्ण वासुदेव ने सुन ली होगी।

सोमिले माहणे अपत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए। जेणं मम सहोयरे कणीयसे भायरे गयसुकुमाले अणगारे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए" त्ति कट्टु सोमिलं माहणं पाएहिं कड्ढावेइ, कड्ढावित्ता तं भूमिं पाणिएणं अब्भोक्खावेइ, अब्भोक्खावित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए सयं गिहं अणुप्पविट्ठे।

तब कृष्ण वासुदेव ने सोमिल ब्राह्मण को मृत्यु प्राप्त देखा। तब वे इस प्रकार बोले— हे देवानुप्रियो ! यह अप्रार्थितप्रार्थक (जिसे कोई नहीं चाहता उस मृत्यु का चाहने वाला) निर्लज्ज सोमिल ब्राह्मण है जिसने मेरे सहोदर गजसुकुमाल अनगार को अकाल में ही काल का ग्रास बना डाला"—ऐसा कह कर उस मृत सोमिल के पैरों को रस्सी से बँधवा कर चाण्डालों द्वारा घसीटवा कर नगर के बाहर फिंकवा दिया और उस शव द्वारा स्पर्शित भूमि को पानी से धुलवाया। फिर वहाँ से चल कर कृष्ण वासुदेव अपने भवन में पहुँचे।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अन्तगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अट्ठमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥८॥

जम्बू ! सिद्धिगति को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने अन्तगडदशा सूत्र के तीसरे वर्ग के

चतुर्थ वर्ग

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स
...स्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।
चउत्थस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं
...व संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! सम
...ण जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अंतगडदसाणं
दस अज्झयणा पण्णत्ता। तं जहा—

जालि मयालि उवयालि, पुरिससेणे य वारिसेणे य।
पज्जुण्ण संब अणिरुद्धे, सच्चणेमी य दढणेमी ॥१॥

अर्थ—जम्बू स्वामी सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं— हे
...भन ! सिद्धगति प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने
...न्तकृद्दशा नामक अष्टम अंग के तृतीय वर्ग के ये भाव कहे
...ह कैसे वर्णन किये। चौथे वर्ग का वर्णन ने क्या अर्थ
है सो कृपा कर के कहिये।"
...जिज्ञासा प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी ने कहा— हे
...! श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने चौथे वर्ग के दस
...कहे हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं— १ जालि २ मयालि
...लि ४ पुरुषसेन ५ वारिसेन ६ प्रद्युम्न ७ शाम्ब
८ अनिरुद्ध ९ सत्यनेमि और १० दृढनेमि ॥१॥

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स

[illegible]—[illegible] हुई । [illegible] देवकी के [illegible] रथ पर [illegible] भगवान के दर्शन करने के लिए [illegible] । भगवान अरिष्ट[illegible] ने [illegible] वासुदेव [illegible] रानी और [illegible] को [illegible] [illegible] अपने घर लौट गई ।

तए णं कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णम[illegible], वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—इमीसे णं भंते ! [illegible]रवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयण-[illegible]वित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए किंमूलए [illegible]णासे भविस्सइ ? कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं [illegible] एवं वयासी—एवं खलु कण्हा ! इमीसे बार[illegible] णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयण[illegible]वित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवाय[illegible]ए विणासे भविस्सइ ॥२॥

[illegible] बाद कृष्ण-वासुदेव ने भगवान अरिष्टनेमि को [illegible] कर इस प्रकार पूछा — हे भगवन् ! बारह [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] का विनाश किस कारण से होगा [illegible] अरिष्टनेमि ने कहा— हे कृष्ण ! बारह योजन [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] का विनाश [illegible]—[illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] होगा ॥

उवागए । अभिसेय हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सए सिंहासणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासण-वरंसि पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ णिसीइत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—

अर्थ—भगवान् अरिष्टनेमि के मुखारविन्द से अपने भविष्य का वृत्तान्त सुन कर कृष्ण-वासुदेव हृष्ट-तुष्ट हृदय से अपनी भुजा ठोकने लगे और हर्षावेश में जोर जोर से शब्द करने लगे। उन्होंने तीन चरण पीछे हट कर सिंहनाद किया। फिर भगवान् को वन्दन-नमस्कार कर वे अभिषेक हस्ति रत्न पर चढ़े और द्वारिका नगरी के मध्य होते हुए अपने भवन में पहुँचे। हाथी से उतर कर जहाँ बाहरी उपस्थानशाला थी और वहाँ अपना सिंहासन था वहाँ गये। वे सिंहासन पर पूर्वाभिमुख बैठे और कौटुम्बिक पुरुषों (राजसेवकों) को बुला कर इस प्रकार कहा—

गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! बारवईए णयरीए सिंघाडग जाव उग्घोसेमाणा एवं वयह— 'एवं खलु देवाणुप्पिया ! बारवईए णयरीए दुवालसजोयण-आयामाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवायणमूले विणासे भविस्सइ, तं जो णं देवाणुप्पिया ! इच्छइ बारवईए णयरीए राया वा जुवराया वा ईसरे तलवरे

[illegible]णा विहरइ। तए णं सा पउमावई अज्जा बहुपडि-
[illegible]ण्णाइं बीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासि-
[illegible]ए संलेहणाए अप्पाणं झोसेइ झोसित्ता सट्ठिं
[illegible]ाइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरई
[illegible] नग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ चरिमेहिं उस्सास-
[illegible]निस्सासेहिं सिद्धा ॥१२॥

पद्मावती आर्या ने यक्षिणी आर्या के समीप सामायिक
[illegible]दि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और साथ ही साथ
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] दिन और
[illegible] [illegible] [illegible] की विविध प्रकार की तपस्या करती हुई
[illegible] [illegible]। पद्मावती आर्या ने पूरे बीस वर्ष तक चारित्र
[illegible] का पालन किया। अन्त में एक मास की संलेखना की
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] भक्त [illegible] [illegible] के
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] उसकी आराधना कर के अंतिम श्वास
[illegible] सिद्ध पद को प्राप्त किया ॥१२॥

॥ पञ्चम वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त ॥

[illegible]ि उक्खेवओ य अज्झयणस्स। तेणं कालेणं तेणं
[illegible] बारवई नयरी रेवयए पव्वए उज्जाणे नंदण
[illegible] तत्थ णं बारवईए नयरीए कण्हे वासुदेवे राया
[illegible]। तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स गोरी देवी लच्छी,

की आवश्यकता होगा। इसलिए वह प्रातःकाल उठा और बांस की छबड़ी (डलिया) लेकर अपनी पत्नी बंधुमती के साथ घर से निकला तथा नगर में होता हुआ बगीचे में पहुंचा और अपनी पत्नी के साथ फूलों को चुन कर एकत्रित करने लगा ॥१०॥

तए णं तीसे ललियाए गोट्ठीए छ गोट्ठिल्ला पुरिसा जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव आगया अभिरममाणा चिट्ठंति। तए णं से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ, करेत्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ।

अर्थ— उस समय पूर्वोक्त ललित गोष्ठी के छह गोष्ठिक मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन में आ कर क्रीड़ा कर रहे थे। इधर अर्जुन माली अपनी पत्नी के साथ फूल चुन कर उनमें से कुछ उत्तम फूल ले कर मुद्गरपाणि की पूजा के लिए उस यक्षायतन की ओर जा रहा था।

तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा अज्जुणयं मालागारं बंधुमईए भारियाए सद्धिं एज्जमाणं पासंति, पासित्ता अण्णमण्णं एवं वयासी— 'एस णं देवाणुप्पिया! अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं इह हव्वमागच्छइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं अज्जुणयं

[illegible]त्थिसत्तमे छ पुरिसे ०) घाएमाणे विहरइ ॥६॥

अर्थ—इस प्रकार इन सातों को मार कर मुद्गरपाणि [illegible] से आविष्ट वह अर्जुन माली राजगृह नगर के बाहर प्रति[illegible] छह पुरुष और एक स्त्री इस प्रकार सात मनुष्यों को [illegible] हुआ घूमने लगा ॥६॥

तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाय महापहपहेसु [illegible]जणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ ४—एवं खलु देवा-[illegible]प्पिया! अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा अन्नाइ[illegible]ण्णाइट्ठे समाणे रायगिहे बहिया छ इत्थिसत्तमे [illegible]रिसे घाएमाणे विहरइ।

अर्थ—इस समय राजगृह नगर के [illegible] [illegible] के बहुत से [illegible] [illegible] इस प्रकार कहने लगे— [illegible] मुद्गरपाणि यक्ष से आविष्ट हो कर अर्जुन [illegible] राजगृह नगर के बाहर [illegible] स्त्री और छह पुरुष इन [illegible] को प्रतिदिन मारता है।"

तए णं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे [illegible] [illegible] महावीरे महाविदेह [illegible] [illegible]समो-[illegible] विहरइ। [illegible] [illegible]

अर्थ—सुदर्शन श्रमणोपासक को जाते हुए देख कर मु
रुष्ट हुआ कुपित हुआ और एक हजार पल का लोहमय
घुमाता हुआ सुदर्शन सेठ की ओर जाने लगा ॥१०॥

तए णं से सुदंसणे समणोवासए मोग्गरपाणि जक्खं
ज्जमाणं पासइ, पासित्ता अभीए अतत्थे अणुव्विग्गे
अभिए असंभंते वत्थंतेणं भूमिं पमज्जइ,
जलि करयल जाव एवं वयासी—"णमोत्थुणं
णं भगवंताणं जाव संपत्ताणं, णमोत्थुणं समणस्स
ओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स पुव्विं च णं
ए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए थूलए पाणाइ-
ए पच्चक्खाए जावज्जीवाए, थूलए मुसावाए, थूलए
दिण्णादाणे, सदारसंतोसे कए जावज्जीवाए इच्छा-
माणे कए जावज्जीवाए। तं इयाणिं पि णं तस्सेव
ए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए सव्वं
वायं सव्वं अदिण्णादाणं सव्वं मेहुणं सव्वं परिग्गहं
पच्चक्खामि जावज्जीवाए सव्वं कोहं जाव मिच्छादंसण
सल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए सव्वं असणं पाणं
खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि
जावज्जीवाए।

जइ णं एत्तो उवसग्गाओ मुच्चिस्सामि तो मे कप्पइ

एवं वयासी—"तुब्भे णं देवाणुप्पिया! के? कहिं वा संपत्थिया?"

तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणयं मालागारं एवं वयासी—"एवं खलु देवाणुप्पिया! अहं सुदंसणे णामं समणोवासए अभिगयजीवाजीवे गुणसिलए चेइए समणं भगवं महावीरं वंदिउं संपत्थिए" ॥१३॥

अर्थ—वह अर्जुन माली कुछ समय के बाद स्वस्थ हुआ और खड़ा हुआ और सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला—हे देवानुप्रिय! आप कौन हैं और कहाँ जा रहे हैं? यह सुन कर सुदर्शन श्रमणोपासक ने कहा—हे देवानुप्रिय! मैं जीवाजीवादि तत्त्वों का ज्ञाता सुदर्शन नामक श्रमणोपासक हूँ और गुणशीलक उद्यान में पधारे हुए श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करने जा रहा हूँ ॥१३॥

तए णं से अज्जुणए मालागारे सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी—"तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया! अहमवि तुमए सद्धिं समणं भगवं महावीरं वंदित्तए जाव पज्जुवासित्तए।" "अहासुहं देवाणुप्पिया!"

अर्थ—यह सुन कर अर्जुन माली सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला—हे देवानुप्रिय! मैं भी तुम्हारे साथ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार यावत् पर्युपासना करने के लिए जाना चाहता हूँ। सुदर्शन श्रमणोपासक ने

रता हूँ। भगवान् ने कहा— हे देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें हो वैसा करो किन्तु धर्म कार्य में प्रमाद मत करो" ॥५॥

तए णं से अइमुत्ते कुमारे जेणेव अम्मापियरो तेणेव ...ए जाव पव्वइत्तए। अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—"बाले सि ताव तुमं पुत्ता! असंबुद्धे सि तुमं पुत्ता! किण्णं तुमं जाणासि धम्मं?"

अर्थ—अतिमुक्तक कुमार अपने माता पिता के पास आ कर इस प्रकार कहने लगा— हे माता पिता! आपकी आज्ञा हो तो मैं श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना चाहता हूँ। माता पिता ने कहा— हे पुत्र! तुम अभी बच्चे हो। तुम्हें धर्म का ज्ञान नहीं है। हे पुत्र! तुम धर्म को कैसे जान सकते हो?

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—"एवं खलु अहं अम्मयाओ! जं चेव जाणामि तं चेव न जाणामि, जं चेव न जाणामि तं चेव जाणामि। तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—"कहं णं तुमं पुत्ता! जं चेव जाणासि तं चेव न जाणासि, जं चेव न जाणासि तं चेव जाणासि?" ॥६॥

अर्थ—इस पर अतिमुक्तक कुमार ने कहा—"हे माता पिता! मैं जिसे जानता हूँ उसे नहीं जानता और जिसे नहीं जानता उसे जानता हूँ।" अतिमुक्तक कुमार की ...

ना दिया । अत इसी लिए कहा कि जिसे मैं नही जानता,
। जानता हू और जिसे जानता हूं, उसे नही जानता । इस
ए हे माता पिता ! आपकी आज्ञा होने पर मैं श्रमण भग
न् महावीर स्वामी से दीक्षा लेना चाहता हूं ।'

तए णं तं अइमुत्त कुमार अम्मापियरो जाहे णो
चाएंति बहूहि आघवणाहिं जाव तं इच्छामो ते जाया!
गदिवसमवि रायसिरिं पासेत्तए । तए णं से अइमुत्ते
मारे अम्मापिउवयणमणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ।
भिसेओ जहा महाबलस्स निक्खमणं जाव सामाइय
ाइयाइ एक्कारस अगाइ अहिज्जइ । बहूइ वासाइ
ामण्णपरियाओ, गुणरयणं जाव विपुले सिद्धे ॥७॥

अर्थ—माता पिता अतिमुक्तक कुमार को अनेक प्रकार
की युक्ति प्रयुक्तियों से भी संयम के दृढ़ भाव से नहीं हटा
के, तब उन्होंने इस प्रकार कहा— हे पुत्र ! हम एक दिन
के लिए भी तुम्हारी राज्यश्री देखना चाहते हैं । यह सुन
कर अतिमुक्तक कुमार मौन रहे । तब माता पिता ने उनका
राज्याभिषेक—[illegible]—किया । [illegible] अतिमुक्तक
कुमार ने भगवान् के पास दीक्षा अंगीकार की । फिर सामायिक
आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और बहुत वर्षों तक
श्रमण-पर्याय का पालन किया तथा गुणरत्न-संवत्सर आदि
तपस्या [illegible] । अन्त में [illegible] विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ।

॥ पन्द्रहवाँ अध्ययन समाप्त ॥

पुत्त रज्जे अहिसिंचइ, एक्कारस अंगाइं, बहुवासा-परियाओ जाव विपुले सिद्धे। एवं खलु जंबू! समणेणं जाव छट्ठमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥१॥

॥ छट्ठो वग्गो समत्तो ॥

अर्थ—धर्म उपदेश सुन कर राजा अलक्ष के हृदय में वैराग्य उत्पन्न हो गया। इसके बाद अलक्ष राजा ने भगवान् के पास उदायन राजा के समान दीक्षा अंगीकार की। उदायन की दीक्षा और इनकी प्रव्रज्या में यह अन्तर है कि उदायन राजा ने अपना राज्य अपने भानजे को दिया था और इन्होंने राज्य अपने ज्येष्ठ-पुत्र को दे कर दीक्षा अंगीकार की। ग्यारह अंगों का अध्ययन किया तथा बहुत वर्षों तक पर्याय का पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥१॥

श्री सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहते हैं—आयुष्मन् जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने छठे वर्ग के सोलह अध्ययनों के ये भाव कहे हैं। जैसा मैंने सुना वैसा कहा है।

॥ छट्ठा वर्ग समाप्त ॥

[illegible] कर्मों का क्षय कर के मोक्ष प्राप्त हुई ॥

॥ तीसरा अध्ययन समाप्त ॥

एव कण्हा वि, णवर महासीह णिक्कीलिय तवो कम्म उवव सुहुग, णवर चोत्तीसइम जाव णेयव्य, [illegible]हेव उच्चारेयव्व, एक्काए परियाडीए एग वरिस छम्मासा अट्ठारस य दिवसा । चउण्ह छ वरिसा दो मासा बारस य अहोरत्ता, सेस जहा कालीए जाव सिद्धा ॥४॥

अर्थ— इस प्रकार कृष्णादेवी का भी चरित्र जानना चाहिए । यह भी श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता थी । दीक्षा ले कर आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा प्राप्त कर के महासिंह निष्क्रीडित तपस्या की । [illegible]

छट्ठ छ, सत्तमेसत्तए सत्तदत्तीओ भोयणस्स पडिगा-
हइ सत्त पाणगस्स।

अर्थ—इसी प्रकार सुकृष्णा आर्या का भी चरित्र जानना
चाहिए। यह भी श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा
की छोटी माता थी। इन्होंने भगवान का धर्मोपदेश सुन कर
दीक्षा अंगीकार की और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा
लेकर सप्तसप्तमिका भिक्षु प्रतिमा तप करने लगी।
इसकी विधि यह है—प्रथम सप्ताह में गृहस्थ के घर से
प्रतिदिन एक दत्ति अन्न और एक दत्ति पानी का ग्रहण की
जाती है। दूसरे सप्ताह में प्रतिदिन दो दत्ति अन्न की और
दो दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है। तीसरे सप्ताह में
प्रतिदिन तीन-तीन दत्ति चौथे सप्ताह में चार चार
पाँचवे सप्ताह में पाँच-पाँच छठे सप्ताह में छह छह दत्ति
और सातवें सप्ताह में प्रतिदिन सात-सात दत्ति अन्न और
पानी की ग्रहण की जाती है।

एव खलु सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं एगूणपण्णाए
राइंदिएहिं एगेण य छण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्त
जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवा-
गया। अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमं-
सित्ता एवं वयासी—"इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं
अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उव-

महासेनकृष्णा आर्या ने चन्दनबाला आर्या से सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। सत्तरह वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया तथा एक मास की संलेखना से आत्मा को भावित करती हुई साठ भक्तों का अनशन से छेदन कर [illegible] अपने सम्पूर्ण कर्मों को नष्ट कर [illegible] प्राप्त हुई।

अट्ठ य वासा आई, एक्कोत्तरियाए जाव सत्तरस।
एसो खलु परियाओ, सेणियभज्जाण नायव्वो॥

इन दस आर्याओं में से प्रथम काली आर्या ने आठ वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया। दूसरी सुकाली आर्या ने नौ वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया। इस प्रकार क्रमशः एक एक रानी के चारित्र पर्याय में एक वर्ष की वृद्धि होती गई। अन्तिम दसवीं रानी महासेनकृष्णा आर्या ने सत्तरह वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया। [illegible] की और [illegible] की प्राप्ति हुई थी।

॥ दसवाँ अध्ययन समाप्त ॥

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

भावार्थ- हे जम्बू! [illegible] [illegible]